Research Paper
E-ISSN NO : 2455-295X | VOLUME : 10 | ISSUE : 5 | MAY 2024

वर्तमान परिदृश्य में नवयुवकों के दृष्टिकोण में संयुक्त परिवार का उभरता स्वरूप : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

राजेंद्र वर्मा [1]

[1] **पूर्व सहायक प्रोफेसर (समाजशास्त्र), राजकीय महाविद्यालय देवली कलां, जिला: ब्यावर, राजस्थान.**

ABSTRACT:

सम्पूर्ण सृष्टि एक कुटुम्ब के रूप में जानी जाती है। लेकिन व्यावहारिक तौर पर प्रत्येक परिवार सामाजिक संरचना का एक महत्वपूर्ण एवं मौलिक अंग है जो समुदाय का रुप धारण कर समाज के रूप में परिवर्तित हो निरंतर आदर्शों का निर्वाहन करते हुए अपने अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर होता जाता है। प्रत्येक परिवार में निरंतर नवीन पीढ़ियों का आमना सामना अपनी पूर्व पीढ़ियों की वैचारिक धारणाओं से होता ही रहता है। फलस्वरूप वैचारिक मंथन अनेक प्रकार से प्रभावित होते हैं। उसमें न केवल परिवार के मुख्य सदस्य बल्कि बालक, युवा वर्ग सभी प्रभावित होते हैं। वर्तमान परिदृश्य में विश्व तनाव को देखते हुए यदि सामाज के इस अंग की ओर दृष्टिपात किया जाए तो बढ़ते हुए भौतिकवाद, औद्योगिकवाद एवं आधुनिकवाद के कारण इस परिस्थिति में अनेक प्रकार से अंतर देखने को मिलता है।

आज का समय प्रतिस्पर्धा का समय है। स्वार्थ और लिप्सा की पूर्ति का समय है। प्रत्येक बालक अपने युवा होने से पूर्व ही न केवल अपने लक्ष्यों की कल्पना करता है बल्कि संपूर्ण जीवन उसे किस प्रकार से, किस स्तर पर और कैसी जीवन शैली के साथ जीना है? किस किस प्रकार से उसे अपने जीवन को आकार प्रकार देना है? इन सब तक के स्वप्न वह पूर्व में ही अंगीकार कर उन्हें परिपूर्ण करने के लिए अपने कर्म पथ पर बढ़ने लगता है। परिवार का एक अंग होने के कारण पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक रूप से कर्मपथ पर आने वाली विषम परिस्थितियां उसे शूल के रूप में दिखाई देती हैं। जिनमें संयुक्त परिवार एक अहम मुद्दा है। जहाँ युवा वर्ग यदि स्वार्थपूर्ति की आवश्यकता है तो चारों ओर संयुक्त परिवार की आकांक्षा करता है लेकिन यदि उसके रास्ते में उसी के परिवार बाधा हो रहे हैं तो वह एकाकी ही चलने की कामना रखता है।

अतः यह एक गंभीर विषय है जो वर्तमान में व्यापक रूप से समाज को प्रभावित कर रहा है। इस शोध पत्र के माध्यम से मेरा उद्देश्य विशेष रूप से संयुक्त परिवार के प्रति युवाओं के बदलते हुए दृष्टिकोण की ओर ही दृष्टिपात करना है क्योंकि वर्तमान में युवाओं के मध्य हो रहे नैतिक मूल्यों, आदर्शों, मानवीय गुणों का ह्रास ही युवाओं के हृदय से, मस्तिष्क से और मन से सहनशीलता, त्याग, समर्पण, प्रेम, सहयोग, धैर्य, अपनापन आदि समस्त गुणों के लोप का कारण है और इसी के फलस्वरूप समाज में अनेक प्रकार की विषमता प्रत्येक परिवार में देखने को मिलती है। यदि ये गुण होते तो समाज आज भी उतना ही नैतिक और विकसित होता जितना की वैदिक काल में था। उसी समय को पुनः कल्पित करने के लिये इस ओर ध्यान देना विशेष अपेक्षा का विषय है।

KEYWORDS:

वर्तमान, परिदृश्य, नवयुवक, दृष्टिकोण, संयुक्त परिवार, स्वरूप, समाजशास्त्रीय, आर्थिक, नैतिक, आध्यात्मिक, शैक्षिक।

PAPER ACCEPTED DATE:	PAPER PUBLISHED DATE:
13th May 2024	15th May 2024

प्रस्तावना

परिवार का एक स्वरुप आधुनिकीकरण और औद्योगिकरण से सम्बन्धित रहा है जिसे केन्द्रीय परिवार या नाभिकीय परिवार कहते हैं और दूसरा पूर्व औद्योगिक या परम्परागत कृषक समाज पर निर्भर रहा है, जिसे विस्तृत अथवा संयुक्त परिवार कहते हैं। इस प्रकार एकाकी और संयुक्त परिवार समाज के विभिन्न स्तरों से जुड़े हुए प्रतीत होते हैं। एकाकी परिवारों की तुलना में बृहत परिवारों में भूमिका संरचना अधिक महत्वपूर्ण एवं प्रतिमानबद्ध है। परम्परागत कृषक समाजों में प्रायः बृहत परिवारों का ही प्रभावी स्थान रहा है। अधिकांश ये परिवार पितृसत्तात्मक और पितृस्थानीय रहे हैं। परिवार का प्रत्येक सदस्य मुखिया के द्वारा नियंत्रित रहा है तथा सभी लोग पारस्परिक अन्तः सम्बन्धों एवं अधिकारों और कर्तव्यों से संगठित रहे हैं। उन में व्याप्त नैतिक मूल्यों, चारित्रिक आदर्शों, आध्यात्मिक गुणों ने परिवार के प्रत्येक सदस्य को एक दूसरे के प्रति बांधकर रखा है। अतः उनका प्रत्येक कर्म परिवार के आर्थिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और राजनीतिक कार्यों की इकाई थी। ऐसे परिवारों का स्वरूप सत्तावादी रहा लेकिन तब व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अभाव था।

वर्तमान समय में विस्तृत परिवार संरचना में परिवर्तन की गति तीव्र हुई है और परिवारों का आकार छोटा होने लगा है। परिवार में बच्चों का एक नये प्रकार से समाजीकरण होने लगा है। अब बच्चे तुलनात्मक रुप से एक छोटे वातावरण में विकसित होन लगे, उन्हें प्यार देने के लिए और देखभाल करने के लिए अधिक संबंधी नहीं हैं। अब बच्चे को खेलने के लिए एक नये वातावरण की आवश्यकता हुई, जहाँ वह वाह्य लोगों से सम्पर्क करता है। इस प्रकार के वातावरण में बच्चों का स्वतंत्र विकास होता है और उनकी आत्मनिर्भरता बढ़ती है। रचनात्मक व्यक्तित्व के विकास में एकाकी परिवार की महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

भारतीय समाज में संयुक्त परिवार और अतीत के पृष्ठ

भारतीय समाज में जब से परिवार संस्था अस्तित्व में आयी तभी से संयुक्त परिवार व्यवस्था विद्यमान रही है। इस संस्था की प्राचीनता का प्रमाण प्राचीनतम हिन्दू ग्रन्थ ऋग्वेद में मिलता है। ऋग्वेद में एक स्थान पर पुरोहित विवाह के समय वर-वधू को आर्शीवाद देते हुए कहता है, "तुम यहीं घर में रहो, परिवार से वियुक्त मत होओ, अपने घर में पुत्रों और पौत्रों के साथ खेलते और आनन्द मनाते हुए समस्त आयु का उपभोग करो।" ऋग्वेद में यह भी कहा गया है कि, "तू सास, ससुर, ननद और देवर पर शासन करने वाली रानी बन।" इन संकलनों से यह प्रमाणित होता है कि संयुक्त परिवार पूर्व वैदिक काल में विद्यमान था, जिसमें माता-पिता, पति-पत्नी, भाई-बहन, पुत्र-पुत्री सभी रहते थे और बाद में होने वाला उसका परिवार भी निवास करता था। इस प्रकार संयुक्त परिवार में एक ही रक्त सम्बन्ध के सदस्य जो सम्पत्ति में समान अधिकार रखते हों, धर्म पूजा करत हों और उनका एक साथ भोजन बनता हो रहते थे। यही नहीं, संयुक्त परिवार में कई पीढ़िया रहती थीं जो पारस्परिक अधिकारों और दायित्व के माध्यम से अपने सदस्यों को एक दूसरे से पिरोये हुए थीं। सभी एक दूसरे के सुख दुख के प्रति हमेशा समर्पित रहते थे। उनके चारित्रिक गुण, नैतिक, मानवीय मूल्य ही उन्हें एक दूसरे से जोड़कर रखते थे। परिवार का वृहत् आकार होने के बाद भी किसी प्रकार के वैचारिक मतभेद नहीं थे जिसके प्रमाण उत्तर वैदिक काल, गृहसूत्र, बौद्धयुग, उपनिषदकाल आदि में प्राप्त होते हैं।

वर्तमान परिदृश्य

सार्वजनिक जीवन में आज अनेक ऐसी दशाएं उत्पन्न हुई हैं जिनके प्रभाव से संयुक्त परिवारों की परम्परागत संरचना तथा इनके कार्यों में व्यापक परिवर्तन दिखायी देने लगे हैं। वर्तमान संयुक्त परिवार संक्रमण के बीच इसकी संरचना सम्बन्धी आस्था में मतभेद उत्पन्न होने लगा है। दूसरी ओर यह संयुक्त परिवार व्यक्ति की परिवर्तित आवश्यकताओं की पूर्ति न कर सकने के कारण भी अपनी उपयोगिता को बनाये रखने में सक्षम नहीं दिखाई देता। वास्तविकता तो यह है कि आज संयुक्त परिवार के आकार सदस्यों के पारस्परिक सम्बन्धों, कर्ता की अधिकार व्यवस्था, परम्परागत कार्यों तथा सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकार आदि सभी क्षेत्रों में परिवर्तन स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगा है। यह परिवर्तन समय, स्थिति, मूल्यों की गिरावट, आवश्यकता के मापदंड

संयुक्त परिवार की संरचना में परिवर्तन

संयुक्त परिवार में संरचनात्मक परिवर्तन के अन्तर्गत प्रमुख रूप से इसके आकार, सदस्यों के पारस्परिक सम्बन्धों, कर्ता की स्थिति, सदस्यों के अन्तवैंयक्तिक सम्बन्ध, स्त्रियों की परिस्थिति तथा सम्पत्ति अधिकारों से सम्बन्धित परिवर्तनों को सम्मिलित किया जा सकता हैं। इन सभी क्षेत्रों में आज संयुक्त परिवार के अन्तर्गत व्यापक परिवर्तन दिखाई दे रहे हैं। संयुक्त परिवार के आकार में इस सीमा तक ह्रास हो गया है कि गांवों में भी व्यक्ति आज अपनी पत्नी और बच्चों के साथ पृथक रूप से रहकर अपने परिश्रम का स्वयं ही पूर्ण उपभोग करने के पक्ष में होता जा रहा है। इस प्रकार व्यक्तिवादिता में वृद्धि होने से संयुक्त परिवार के सदस्यों के बीच द्वितीयक सम्बन्धों का विकास देखने को मिल रहा है। आज विवाह सम्बन्धों में भी व्यक्तिवादिता के दर्शन होने लगे हैं। परम्परागत रूप से सयुंक्त परिवार धार्मिक क्रियाओं की पूर्ति का माध्यम था। किन्तु संयुक्त परिवार की संरचना में अब धार्मिक क्रिया-कलापों का विशेष महत्व नहीं रह गया है। आज व्यक्ति के विचारों के साथ साथ उसकी परम्पराएं, रीति-रिवाज, प्रथाएँ सभी कुछ आधुनिकता के रंग में रंगने लगी हैं। जिसके कारण वह परिवार में किसी के हस्तक्षेप को स्वीकार नहीं करना चाहता और यह हस्तक्षेप माता पिता, सास ससुर, दादा दादी किसी भी पूर्व पीढ़ी के रूप में बिल्कुल भी स्वीकार्य नहीं है। यही कारण है कि परिवार संयुक्त से अधिक एकाकी की ओर अग्रसर हो रहा है जिसने समाज के संपूर्ण मानदंडों को पूर्णतः परिवर्तित कर दिया है। अनेक स्थलों पर संयुक्त परिवार में परिवर्तन आने का कारण आवश्यकता अथवा प्रतिस्पर्धा नहीं वरन परिस्थितियों की विवशता भी है। अस्तु वर्तमान परिदृश्य संयुक्त परिवारों की संरचना के रूप में पूर्णतः बदलाव लिए हुए है।

संयुक्त परिवार के कार्यों में परिवर्तन

किसी समय में संयुक्त परिवारों ने भारतीय ग्रामीण जीवन के लिये इतने महत्वपूर्ण कार्य किये थे, जिनके कारण इन्हें ग्रामीण जीवन का मौलिक प्रतिनिधि कहा जाता था। किन्तु आज पश्चिमीकरण एवं नगरीयकरण की प्रक्रियाओं के प्रभाव से संयुक्त परिवार के सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, धार्मिक तथा मनोरंजनात्मक आदि सभी क्षेत्रों में महत्वपूर्ण परिवर्तन दिखाई दे रहा है। इसके साथ ही प्रथाएं, परम्पराएं, लोकाचार एवं धार्मिक विश्वास के बंधन ढीले पड़ते जा रहे हैं। नवीन शिक्षा प्रणाली के प्रभाव से अधिक संयुक्त परिवारों के सदस्य अपने को परिवार के परम्परागत नियंत्रण से मुक्त रखने का प्रयत्न करने लगे हैं। आज के युग में व्यक्तिवादिता, निहित स्वार्थ तथा निजी सम्पत्ति की भावना के कारण परिवार के सदस्यों द्वारा व्यवसाय का चुनाव और आर्थिक लाभ-हानि का निर्धारण व्यक्तिगत आधार पर ही होने लगा है।

समाजशास्त्रियों का दृष्टिकोण और संयुक्त परिवार

भारतवर्ष में पारम्परिक संयुक्त परिवारों में परिवर्तन से सम्बन्धित जो अध्ययन हुए हैं वे परस्पर विरोधी विचारों को अभिव्यक्त करते हुए से प्रतीत होते हैं। सबसे जटिल समस्या यह है कि वर्तमान समय में संयुक्त परिवार की सामाजिक परिभाषा का अभाव सा दिखाई देते है, इसलिये अधिकांशतः यह विषय विवादग्रस्त है। साथ ही कुछ अध्ययनों से यह सिद्ध तो नहीं होता कि शहरी जीवन संयुक्त परिवारों को खण्डित करता है।

अग्रवाल का यह अवलोकन है कि मारवाड़ी समाज शताब्दियों से शहरों में रह रहा है फिर भी संयुक्त परिवार प्रथा का उत्कृष्ट उदाहरण है।

औद्योगीकरण, तकनीकी विकास और पाश्चात्य सभ्यता के बावजूद भी मारवाड़ी परिवार संयुक्त रूप में रह रहा है। ऐय्पन ने भी अपना विचार इसी से मिलता जुलता प्रस्तुत किया है। इनके अनुसार उच्च जाति एवं उच्च आय वाले परिवार आज भी शहरों में संयुक्त रूप से रहना चाह रहे हैं अपेक्षाकृत निम्न जाति के।

संयुक्त परिवार के प्रति मनोवैज्ञानिक झुकाव गाँवों में रहने वाले तथा शहरों में रहने वाले परिवारों में एक समान दिखायी देता है। पाल ने पश्चिमी बंगालियों के बीच अध्ययन करने के बाद देखा कि 60.5 प्रतिशत नगरीय तथा 54.5 प्रतिशत ग्रामीण लोग संयुक्त परिवार में रहना पसन्द करते हैं। इसी प्रकार गोरे का एक अध्ययन है जो दिल्ली के अग्रवाल परिवारों पर किया गया। उसमें देखा गया कि तीन चौथाई लोग संयुक्त परिवार को चाहते हैं।“

इन अध्ययनों में विशेष रूप से बात पर ध्यान केंद्रित किया गया की संयुक्त परिवार में रहने के प्रति युवकों का दृष्टिकोण कुछ रुझान पूर्ण दिखाई दिए। उनका अपने दादी दादा के प्रति लगाव भाई बहनों के प्रति लगाव उनके नैतिक गुणों का प्रतिपादक है।

नवयुवकों के दृष्टिकोण में संयुक्त परिवार का उभरता स्वरूप

संख्यात्मक दृष्टिकोण

संख्या की दृष्टि से यदि नवयुवकों में संयुक्त परिवार के प्रति दृष्टिकोण को देखा जाए तो 50% से अधिक युवकों का मानना है कि, उनका विवाह 22 से 26 वर्ष की आयु के बीच हो जाना चाहिए। विभिन्न समाजशास्त्रीय अध्ययनों से यह तथ्य सामने आए हैं कि विवाह के बाद लगभग 71% प्रतिशत लड़के अपने माता पिता के साथ रहना चाहते हैं। लेकिन मात्र 44% लड़कियां ही ऐसी है जो विवाह के उपरांत अपने सास ससुर के साथ रहना पसंद करती हैं। इसका एक कारण यह भी है कि, विवाह के उपरांत लड़कों की तुलना में लड़कियां अधिक मात्रा में स्वप्निल प्रवृत्ति को धारण करती हैं। वह अपने अनुकूल नया परिवार बसाना चाहती हैं और परिवार को अपने नियंत्रण के अनुसार आगे बढ़ाना चाहती हैं।

मुख्य रूप से वर्तमान समय में आधुनिकता, भौतिकता, नगरीयता, और पाश्चात्यता की चमक में रह रही लड़कियां अपने ऊपर सास ससुर का नियंत्रण पसंद नहीं करतीं। अतः उनका दृष्टिकोण संयुक्त परिवार के विपरीत दिखाई देता है।

सत्तावादी दृष्टिकोण

संयुक्त परिवार की एक बड़ी विशेषता है कि यह सत्तावादी प्रवृत्ति के होते हैं। पिता या दादा का सत्तात्मक व्यवहार इन परिवारों को चारों ओर से घेरे हुए होता है घर के सभी सदस्य घर के मुखिया के नियम कानून परंपराओं आदि को सहज रूप से वहन करते हैं। समाज में भी उनके नियमों के अनुसार ही व्यवहार किया जाता है। अतः समाज में रह रहे लड़के और लड़कियों पर जब उस दृष्टि से अध्ययन किया गया तो समाजशास्त्रियों ने पाया की लड़कों की अपेक्षा लड़कियां अधिक स्वतंत्र रहना चाहती हैं। वह सत्तात्मक परिवारों के स्थान पर लोकतंत्रात्मक परिवारों में रहना पसंद करती हैं। उनकी सहजता उनके स्वयं के नियंत्रण पर है। वर्तमान परिदृश्य में नवीन पीढ़ी किसी भी प्रकार से सत्तात्मक परिवारों को स्वीकार करने में अक्षम है। आंकड़ों के तौर पर जब इस दृष्टि से अध्ययन किए गए हैं तो यही तथ्य सामने आये हैं कि, लड़के माता पिता के नियंत्रण में रहना पसंद करते हैं जबकि लड़कियां सास ससुर के नियंत्रण में रहना पसंद नहीं करतीं। अतः संयुक्त परिवारों के ह्रास का एक कारण सत्तावादी दृष्टिकोण भी है।

निर्णयात्मक दृष्टिकोण

वर्तमान युग के नवयुवक अपने जीवन के निर्णयों को लेकर अत्यधिक संवेदनशील रहते हैं। इस कारण वह अपने जीवन के निर्णयों को लेने का अधिकार स्वयं अथवा अपने जीवन साथी के अतिरिक्त अपने माता पिता को देना भी उचित नहीं समझते। जैसे जैसे शिक्षा का प्रवाह गतिमान हो रहा है वैसे वैसे युवासोच भी नवीनता, चुनौतीपूर्ण लक्ष्यों, अत्यधिक धन प्राप्ति की ओर अग्रसर हो रही है। अतः प्रत्येक युवक विशेष रूप से अपने जीवन साथी, अपने व्यक्तित्व, अपने लक्ष्य और अपनी जीवन शैली से जुड़े हुए सभी निर्णयों को लेने के लिए स्वयं पर ही विश्वास करता है। इस दृष्टि से जब सामाजिक अध्ययनों पर चर्चाएं की गई तो यही तथ्य सामने आये की लड़कों की अपेक्षा लड़कियां अधिक रूप से निर्णय लेने के दृष्टिकोण में स्वतंत्रता चाहती है। वह अपने जीवनसाथी चुनने, व्यक्तित्व निर्माण तथा अन्य सभी निर्णयों के लिए अपने माता पिता के वशीभूत नहीं रहना चाहती। यहाँ तक कि विवाह के उपरान्त वह अपने पति के वशीभूत भी नहीं रहना चाहतीं। जबकि लड़के यह अधिकार अपने माता पिता को देने में अधिक रुचि रखते हैं।

आधिकारिक दृष्टिकोण

विभिन्न सामाजिक अध्ययन के अनुसार वर्तमान परिदृश्य प्राचीन काल, मध्यकाल से पूर्णतः परिवर्तित है। आज का नवयुवक अपने संपूर्ण अधिकारों की प्राप्ति प्रारंभ से ही चाहता है। यही नहीं जैसे जैसे शिक्षा का स्तर बढ़ा है परिवार के मुखिया के अधिकारों में भी कमी आई है। आज परिवार में बालक के युवावस्था में परिवर्तित होते होते परिवार के मुखिया के आधिकार वैचारिक राय लेने के रूप में युवकों के हाथ में आने लगे हैं। क्योंकि भारतवर्ष एक पित्रसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था है अतः अधिकारों के मामले लड़कियों की अपेक्षा लड़कों के पास इसका प्रतिशत अधिक है। इसके बाद भी वर्तमान अध्ययनों में अधिकार की दृष्टि से यह तथ्य सामने आते हैं कि, आज के नवयुवक माता पिता की सहमति से अधिक जीवनसाथी की सहमति पर विशेष बल देते हैं। वह माता पिता को पर्याप्त शिक्षित अथवा जागरूक नहीं समझते। ग्रामीण और नगरीय क्षेत्रों में निवास कर रहे परिवारों में और उनके निर्णय लेने की क्षमता में भी विभिन्नता पाई जाती है। इन सभी के आधार पर वर्तमान परिदृश्य यही कहता है की कुछ प्रतिशत उत्तरदाता ही अपने अधिकारों को अपने माता पिता को देते हैं जबकि इसके स्थान पर 54% छात्र और 22% छात्राएं यह राय देती हैं कि वह अपने अधिकार अपने जीवन साथी को ही देना उचित समझते हैं। इसके अतिरिक्त लगभग 22 प्रतिशत छात्र और 7% छात्राएं अपने अधिकारों के प्रति स्वयं सजग रहना चाहती इनमें से कुछ ऐसे भी हैं जो माता पिता से सहमति लेकर अपने अधिकारों का प्रयोग करते है। जबकि मात्र कुछ% ही ऐसे युवक युवती है जो संयुक्त परिवार में रहने के पक्षधर हैं।

निष्कर्ष

अंततः कह सकते हैं कि वर्तमान समय में जो तथ्य सामने आए हैं उनमें पूर्ण रूप से तो भारतीय समाज संयुक्त परिवार को छोड़ता हुआ दिखाई नहीं देता लेकिन फिर भी जितने प्रतिशत नवयुवक एकाकी परिवार की ओर अग्रसर हो रहे है उनका कोई एक कारण नहीं। उनके बहुत से कारण हैं जिस वजह से वह एकत्व की ओर अग्रसर हो रहे है इसका एक बड़ा कारण यह भी देखा गया है कि, आज समाज में परिवार पहले से बहुत छोटे हो गए हैं। महंगाई, कम आय, बदलते प्रतिमान, नैतिक गुणों का ह्रास, सामाजिक संबंधों की सीमितता, मात्र अपने अधिकार का बोध, केवल अपने सगे रिश्तों के प्रति लगाव, भौतिकता का अंधानुकरण, पश्चिमीकरण की ओर निरंतर अग्रसर होना, शिक्षा को मात्र अधिक धन प्राप्त की दृष्टि से ग्रहण करना, परम्पराओं को एक जरूरत समझकर वहन करना आदि बहुत सारे मानदंड है जिन्होंने वर्तमान में संयुक्त परिवार के प्रति नवयुवकों के दृष्टिकोण को बदल दिया है।

लेकिन यह निश्चित है कि, जब कोई ग्राफ एक लंबे समय तक नीचे गिरता है तो पुनः वह ऊपर की ओर उठता है। अतः इस नियम के अनुसार आगे आने वाली पीढ़ी सर्वदा संयुक्त परिवार की ओर अग्रसर होगी। क्योंकि आज बालकों में मूल्यों और नैतिकता तथा अपनतत्व को लाने के लिए प्रत्येक माता पिता चिंतित हैं जिस हेतु वह अपनी पूर्व पीढ़ी की ओर दृष्टि डाले दिखाई देते हैं। जो इस बात का प्रमाण है की आगे आने वाली पीढ़ियों का उभरता हुए रुझानों का स्वरूप संयुक्त परिवार के प्रति अनुकूल और सकारात्मक विचार रखने वाला होगा। लेकिन फिर भी यह विषय अत्यधिक गहन और व्यापक है। जिसपर किए जाने वाले अध्ययन निरंतर पपरिवर्तनशील और गतिशीलता को धारण किए हुए हैं। उन्हें किसी एक तथ्य में बांध पाना असंभव है।

REFERENCES

1. बेवर मैक्स थियरी आफ सोशल एण्ड इकोनामिक आर्गनाइजेशन (1947)
2. मन्थली पब्लिक ओपिनियन सर्वे. - इण्डियन इन्स्टीच्यूट आफ पब्लिक ओपिनियन, (अक्टूबर 1955)
3. मेण्डलबाम 'द फेमिली इन इण्डिया' (शिकागो, प्रेस, 1957)
4. लिटवाक इगन 'आकुपेशनल मोविलटी एण्ड इक्सटेंडेड फेमिली कोहेसन', (अमेरिकनल सोसियालोजिकल रिब्यू 1960)
5. निमकाफ एम०एफ० : टाइप्स आफ फेमिली एण्ड टाइप्स इकानमी' (अमेरिकनल जनरल आफ सोसियालोजी 1960)
6. गुडे वि०जे० 'वर्ल्ड रिवोल्यूसन एण्ड फेमिली पैटर्न' (लन्दन: द फी प्रेस आफ ग्लेस्को, कुलियर मैकमिलन, 1963)
7. कपाड़िया के०एम० : मैरिज एण्ड फेमिली इन इण्डिया' (पापुलर प्रकाशन, बाम्बे 1983)
8. देसाई ए०आर० 'रूरल सोसियालोजी इन इण्डिया' 1999.